यूजीसी केयर लिस्ट में शामिल
अप्रैल–जून 2021
वर्ष 11, अंक–22

मूल्य–100/-
ISSN NO. 2320-5733

समसामयिक सृजन

समकालीन साहित्य, शिक्षा एवं संस्कृति का संगम

Scanned with CamScanner

समसामयिक सृजन

साहित्य, शिक्षा और संस्कृति का संगम

संरक्षक

डॉ. प्रभात कुमार

प्रधान संपादक एवं परामर्श

डॉ. रमा

संपादक

डॉ. महेन्द्र प्रजापति

संपादन सहयोग

रीमा प्रजापति

आवरण चित्र

डॉ. प्रेम प्रकाश मीणा

ले-आउट

हर्ष कंप्यूटर्स

संपादकीय कार्यालय

मकान नं. 189, ब्लॉक-एच
विकासपुरी, नई दिल्ली-110018

पत्राचार

एफ-114, तृतीय तल, SLF, वेद विहार
नियर : शंकर विहार ऑटो स्टैंड, लोनी
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश-201102

सदस्यता

आजीवन : 5000/- रुपए
संपर्क : 9871907081
वेबसाइट : www.samsamyiksrijan.com
Email : samsamyik.srijan@gmail.com

प्रकाशन एवं मुद्रण

हरिन्द्र तिवारी

हंस प्रकाशन, दिल्ली

मो. : 7217610640, 9868561340
ईमेल : hansprakashan88@gmail.com
वेबसाइट : www.hansprakashan.com

पृ.सं.

- रमेश पोखरियाल निशंक... : *प्रो. रमा* 3
- साहित्य का सामर्थ्य : *सत्यकेतु सांकृत* 5
- 'कब होगी वह भोर... : *डॉ. जी. वी. रत्नाकर* 7
- अभिशप्त जीवन–'दोहरा... : *वंदना एस.* 9
- बौद्ध काल में... : *संजय यादव* 15
- गोरख पांडेय की कविता... : *प्रीति प्रसाद* 18
- ज्ञान प्रकाश विवेक के उपन्यास... : *इंदु रानी* 21
- हिंदी दलित कथा साहित्य... : *एल. अनिल* 24
- 'स्वर्ग की अदालत' का नाटक... : *तितिक्षा जी वसावा* 27
- 'कुमारजीव' : जीवन के ध्येय... : *कुमार सौरभ* 30
- भारतीय समाज में तृतीय लिंगी... : *हेमंत यादव* 33
- 'रागदरबारी' की भाषा में... : *डॉ. शिप्रा श्रीवास्तव 'सागर'* 36
- मितभाषण : भावनाओं के... : *मुनि कुमार श्रमण* 39
- एक बहुआयामी व्यक्तित्व... : *डॉ. सुमन फुलारा* 43
- साहित्य और विभाजन : संदर्भ... : *निधि वर्मा* 45
- नासिरा शर्मा के कथा साहित्य... : *अजय कुमार* 48
- मृणाल पाण्डे के सांस्कृतिक... : *आलोक कुमार तिवारी* 52
- माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों... : *अमित कुमार दूबे* 55
- मीनाक्षी स्वामी के उपन्यासों... : *विजय कुमार पाल* 58
- 'हरित मानव की तलाश' : *बिजीना टी.* 62
- विश्वनाथ प्रसाद तिवारी की... : *डॉ. जगदीश* 65
- महादेवी वर्मा का नारी चिंतन... : *डॉ. सुनीता शर्मा* 69
- अज्ञेय के कथा-साहित्य में... : *डॉ. सुरेंद्र शर्मा* 72
- एकांत के आख्यान को रचती... : *कार्तिक राय* 76
- विनोबा भावे जी के शिक्षा... : *डॉ. गिरीश कुमार द्विवेदी* 79
- मुंशी प्रेमचंद : आदर्शवाद से... : *जितेंद्र शर्मा* 82
- उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य... : *सोनी यादव* 85
- हिंदी साहित्य में रसानुभूति की... : *विशाल मिश्र* 89
- चित्रा मुद्गल की कहानियों... : *कृपा शंकर* 92
- अमरकांत के कथा साहित्य... : *अशोक कुमार यादव* 95
- काशीनाथ सिंह की उपन्यासिक... : *देवव्रत यादव* 98
- सुभद्रा कुमारी चौहान के साहित्य... : *ललिता देवी* 101
- प्राथमिक शिक्षा में शिक्षा के... : *पीयूष कांती* 104
- समाज के उन्नयन में अल्पसंख्यक... : *अजीत कुमार मिश्र* 108
- मंगलेश डबराल के काव्य में... : *सुरेश कुमार मिश्र* 110
- बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की... : *डॉ. सरोज राय* 112
- हमारे नायक राम में... : *विजय बहादुर यादव* 116
- ललित निबंधों में समाज की... : प्रदीप कुमार तिवारी 119
- 'थर्ड जेंडर' एवं... : *प्रियंका कलिता* 123
- बद्री सिंह भाटिया के... : *कुसुम देवी* 125
- मध्यवर्ग... : *बलजिंदर कुमार-डॉ. आर.पी.एस. जोश* 128

स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी : डॉ. महेन्द्र प्रजापति द्वारा एच.-ब्लॉक, मकान नं. 189, विकासपुरी, नई दिल्ली-110018 से प्रकाशित।

Scanned with CamScanner

• धार्मिक शोषण का... : एन आर सेतु लक्ष्मी 132
• पति-पत्नी के अहं के... : स्नेहा शर्मा 135
• नागार्जुन के साहित्यिक... : संदीप कुमार 138
• बाँसवाड़ा... : डॉ. सौरभ त्यागी-सुरभी दोषी 140
• सम्मेलन पत्रिका का... : त्रिभुवन गिरि 145
• बाणभट्ट की आत्मकथा का... : चंदन कुमार 148
• अमरकांत कीं... : अजीत कुमार पटेल 151
• रामविलास शर्मा के... : डॉ. अजीत सिंह 154
• चित्रा मुद्गल के... : डॉ. अमिता तिवारी 158
• विवेकी राय का कविता... : अनुपमा तिवारी 161
• वर्तमान समय में... : डॉ. आशीष यादव 164
• भारतेंदुयुगीन कविता... : डॉ. भास्कर लाल कर्ण 167
• भोजपुरी बारहमासा... : भव्या कुमारी 172
• नारी मुक्ति का... : डॉ. बीना जैन 175
• हिंदी पत्रकारिता... : डॉ. चयनिका उनियाल 178
• लोकमानस के अनूठे... : डॉ. छोटू राम मीणा 181
• महामारी कोविड-19 के... : डॉ. ऋषिपाल-
डॉ. ज्योति श्योराण-डॉ. जयपाल मेहरा
डॉ. निधि जैन-सुश्री पल्लवी 185
• योग : विश्व... : डॉ. दयाशंकर सिंह यादव 189
• पूना पैक्ट की... : डॉ. दीपक कुमार गुप्ता 192
• लोकमान्य तिलक... : डॉ. राजेश कुमार शर्मा 195
• मानवतावादी व महिला... : डॉ. संगीता शर्मा 200
• वर्तमान परिपेक्ष्य में... : डॉ. शारदा देवी 204
• संस्कृति के वाहक... : डॉ. भारती बतरा 208
• हरियाणवी सिनेमा में... : डॉ. जयपाल मेहरा 211
• महादेवी वर्मा की... : डॉ. गीता पांडेय 214
• 'मानस' में उपलब्ध... : डॉ. गीता कौशिक 218
• हिंदी नवगीतों के... : डॉ. प्रकाश चंद्र गिरि 221
• भूमण्डीकरण का... : डॉ. कमलेश सरीन 223
• सावित्री बाई फुले... : डॉ. हंसराज 'सुमन' 226
• हिंदू धर्मशास्त्र और... : डॉ. अमिष वर्मा 229
• भूमंडलीकरण और... : हुलासी राम मीना 234
• हिंदी की आदिवासी... : डॉ. जसपाल कौर 237
• रामधारी सिंह... : डॉ. जायदासिकंदर शेख 240
• डॉ. रामविलास शर्मा... : डॉ. जितेश कुमार 244
• वर्तमान पत्रकारिता में... : कामरान वासे 247
• 'पद्मावत' में प्रेम... : डॉ. केदार कुमार मंडल 251
• आदिवासी कविताओं... : प्रो. खेमसिंह डहेरिया 254
• क्षेत्रीय मौखिक... : रंजन कुमार 257
• अपने स्वत्व को... : लक्ष्मी विश्नोई 260
• श्रीलाल शुक्ल... : सुधीर कुमार जोशी 263
• आत्मनिर्भर महिलाओं... : डॉ. बिजेंद्र कुमार 267
• श्यौराज सिंह बैचेन... : डॉ. मणिबेन पटेल 270
• भारतीय समाज में... : मनीष कुमार सिंह 273
• आधुनिक इतिहास में... : डॉ. मेघना शर्मा 276
• निर्गुण संतों की... : डॉ. प्रदीप कुमार' 280
• दलित और... : डॉ. नुरजाहान रहमातुल्लाह 283
• भारत में भाषाई... : ओमप्रकाश यादव 286
• मानवीय संस्कृति... : डॉ. प्रवीण कुमार 290
• कामाख्या शक्तिपीठ... : डॉ. प्रीति बैश्य 296
• 'मोहन राकेश की... : प्रिया पाण्डेय 299
• हिंदी गजल... : डॉ. जियाउर रहमान जाफरी 303
• भीष्म साहनी का... : डॉ. राम किंकर पाण्डेय 306
• भारत की नई शिक्षा... : डॉ. रमेश कुमार 310
• श्रीलाल शुक्ल के... : रवीश कुमार यादव 313
• शैलेंद्र के भोजपुरी... : डॉ. संगीता राय 315
• रामनरेश त्रिपाठी... : संजीव कुमार पाण्डेय 319
• सूर्यकांत त्रिपाठी... : सरिता कुमारी 322
• मृदुला गर्ग के... : डॉ. सविता डहेरिया 325
• मोहन राकेश की... : डॉ. सुनील कुमार सुधांशु 331
• मीडिया में दलितों का... : डॉ. स्वर्ण सुमन 334
• डॉ. कुँअर बेचैन की... : तेज प्रताप 340
• जनजातीय.. : डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय 344
• हिंदी दलित कविता... : विजय कुमार 348
• आधुनिक हिंदी... : विकास कुमार सिंह 351
• हिंदी साहित्य में... : विनय कुमार पाठक 354
• वैश्वीकरण और... : मुरली मनोहर भट्ट 357
• सुभद्रा कुमारी... : अनिता उपाध्याय 360
• हिंदी रंगमंच की... : डॉ आशा-डॉ. अनिल शर्मा 363
• जनमाध्यम के रूप... : डॉ. योगेश कुमार गुप्ता 367
• परंपराओं और... : डॉ. नीरव अडालजा 372
• हिंदी कथा साहित्य... : प्रियंका कुमारी गर्ग 377
• वैश्वीकरण की दौड़... : डॉ. कमलेश कुमारी 381
• 'रामचरितमानस' में... : डॉ. हेमवती शर्मा 385
• रघुवीर सहाय के... : प्रतिभा देवी 387
• भारतीय संस्कृति बनाम... : डॉ. स्वाति श्वेता 390
• अनौपचारिक... : मुकेश कुमार मीना-विनोद सेन 394
• इतिहास शिक्षण में... : डॉ. अजीत कुमार बोहत 398
• परंपरागत नृत्य कलाओं... : डॉ. दिलावर सिंह 401
• राष्ट्रीय शिक्षा... : मोनिका कौल-ईश्वर सिंह 405
• सामाजिक माध्यमों... : डॉ. अनिल कुमार 408
• हिंदी सिनेमा... : डॉ. संतोष कु. सिंह 412
• शिक्षक शिक्षा का... : विक्रम बहादुर नाग 415
• रामनरेश... : सरला माधव प्रसाद तिवारी 419
• वैदिक साहित्य में... : डॉ. राजवीर शास्त्री 423
• उच्च शिक्षा में... : मोना भटनागर-नम्रता सोनी 424
• तुलसी का काव्य... : डॉ. कुमकुम श्रीवास्तव 428
• समावेशी शिक्षा... : अश्वनी 433
• अस्तित्व की... : मनीष कुमार-डॉ. रानीबाला गौड़ 436
• अज्ञेय के... : गरिमा वर्मा--डॉ. रानीबाला गौड़ 438

Scanned with CamScanner

जनजातीय संस्कृति के विघटन का प्रश्न और हिंदी उपन्यास

डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय

शोध सारांश

जनजातीय समाज आज गंभीर संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। वह अनेक सांस्कृतिक समस्याओं से ग्रस्त है। इन समस्याओं में धर्मांतरण, अलगाव, अंधविश्वास और परसंस्कृतिग्रहण प्रमुख हैं। आशीष बोस, निहार रंजन रे, एल. पी. विद्यार्थी, राय बर्मन तथा अनेक दूसरे विद्वानों ने भारत की विभिन्न जनजातियों का अध्ययन करके स्पष्ट किया है कि विभिन्न जनजातीय समस्याएँ परसंस्कृतिग्रहण तथा सात्मीकरण का परिणाम हैं। परसंस्कृतिग्रहण तथा सात्मीकरण की प्रक्रियाओं ने संसार की लगभग सभी जनजातियों के जीवन में नई समस्याएँ पैदा की हैं, लेकिन भारत में जनजातियों का जीवन संक्रमण काल में होने के कारण उनके ऊपर इसका अधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। मजूमदार तथा मदन ने भी लिखा है कि भारत में आदिवासियों की अधिकांश समस्याएँ उनके भौगोलिक पृथक्करण और नए सांस्कृतिक संपर्क का परिणाम हैं। बाहरी संपर्कों के परिणामस्वरूप जनजातियों का देश के अन्य धर्मों से संपर्क हुआ, जिसकी वजह से दो अलग-अलग संस्कृतियों में टकराहट हुई। चूँकि अन्य धर्मो का वैचारिक आधार ज्यादा मजबूत था इसलिए आदिवासियों का सांस्कृतिक विघटन प्रारंभ हुआ। इससे उनके अंदर अपने परंपरागत धर्म के प्रति उपेक्षा और तिरस्कार की भावना पैदा हुई।

Keywords : विघटन, अलगाव, धर्मांतरण, शोषण, टकराव, विलुप्त, तिरस्कार, उपेक्षा, हीनताबोध, विकास।

आदिवासी समाज वर्तमान समय में अनेक सांस्कृतिक समस्याओं से ग्रस्त है। इन समस्याओं में धर्मांतरण, अलगाव, अंधविश्वास और परसंस्कृतिग्रहण प्रमुख हैं। औपनिवेशिक काल में ईसाई मिशनरियों द्वारा उनके विकास एवं कल्याण के नाम पर आर्थिक प्रलोभन देकर बड़े पैमाने पर आदिवासियों का धर्मांतरण किया गया जिसके कारण अनेक समस्याएँ पैदा हुईं। वर्तमान में भाषा की समस्या, परसंस्कृतिग्रहण के फलस्वरूप उपजी अनुकूलन की समस्या, परंपरागत जनजातीय धर्म के प्रति उदासीनता, परस्पर ऊँच-नीच की भावना और लोक कलाओं के पतन से आदिवासी सभ्यता और संस्कृति गंभीर संकट के दौर से गुजर रही है। आज आदिवासियों के समक्ष एक ओर विकास की चुनौती है तो दूसरी ओर अपने सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों को बचाए रखने की जद्दोजहद भी है। अपवादात्मक स्थितियों को छोड़ दिया जाए तो बाजारीकरण और भूमण्डलीकरण के इस दौर में आदिवासी कला संस्कृति के समक्ष अस्तित्व का गंभीर संकट उपस्थित हो गया है।

आशीष बोस, निहार रंजन रे, एल. पी. विद्यार्थी, राय बर्मन तथा अनेक दूसरे विद्वानों ने भारत की विभिन्न जनजातियों का अध्ययन करके स्पष्ट किया है कि विभिन्न जनजातीय समस्याएँ परसंस्कृतिग्रहण तथा सात्मीकरण का परिणाम हैं। परसंस्कृतिग्रहण तथा सात्मीकरण की प्रक्रियाओं ने संसार की लगभग सभी जनजातियों के जीवन में नई समस्याएँ पैदा की हैं, लेकिन भारत में जनजातियों का जीवन संक्रमण काल में होने के कारण उनके ऊपर इसका अधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। यहाँ कि जनजातीय समस्याएँ समान प्रकृति की नहीं हैं। इसे स्पष्ट करने के लिए वेरियर एल्विन ने जनजातियों को चार मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया है–

1. पहली श्रेणी में वे जनजातियाँ हैं जो दुर्गम पहाड़ी क्षेत्रों, जंगलों या भौगोलिक रूप से पृथक स्थानों में रहती हैं। बाहरी समूहों से इनका संपर्क बहुत कम है। मारिया, जुआंग, बांदो तथा खरिया इत्यादि जनजातियाँ इसी श्रेणी में आती हैं। इनकी समस्याएँ परंपरागत प्रकृति की हैं।
2. दूसरी श्रेणी में वे जनजातियाँ हैं जो अपनी परंपरागत संस्कृति को बनाए रखने के बाद भी बाहरी समूहों को संदेह की दृष्टि से नहीं देखती। इनकी समस्याएँ मुख्यतः सामाजिक और सांस्कृतिक हैं।
3. तीसरी श्रेणी की जनजातियों को एल्विन ने 'कुलीन जनजातियाँ' कहा है। अपनी मौलिक संस्कृति की अनेक विशेषताओं को बनाए रखने के बाद भी यह बाहरी संस्कृतियों के तत्वों को भी ग्रहण कर रही हैं। नागा, भील, उरांव तथा टोडा आदि इन जनजातियों के प्रमुख उदाहरण हैं। जनजातीय धर्म के प्रति तिरस्कार, बाहरी समूहों द्वारा शोषण तथा सामाजिक भेदभाव इनकी प्रमुख समस्याएँ हैं।
4. चौथी श्रेणी की जनजातियों की संख्या सर्वाधिक है। इन

Scanned with CamScanner

> जनजातियों की एक बड़ी संख्या अपने परंपरागत व्यवसायों को छोड़कर आजीविका के लिए नगरों या आस-पास की बस्तियों में रहने लगी हैं। इसी कारण उनके जीवन में सर्वाधिक सांस्कृतिक विघटन हुआ है।

मजूमदार तथा मदन ने भी लिखा है कि भारत में आदिवासियों की अधिकांश समस्याएँ उनके भौगोलिक पृथक्करण और नए सांस्कृतिक संपर्क का परिणाम हैं। बाहरी संपर्कों के परिणामस्वरूप जनजातियों का देश के अन्य धर्मों से संपर्क हुआ, जिसकी वजह से दो अलग-अलग संस्कृतियों में टकराहट हुई। चूँकि अन्य धर्मो का वैचारिक आधार ज्यादा मजबूत था इसलिए आदिवासियों का सांस्कृतिक विघटन प्रारंभ हुआ। इससे उनके अंदर अपने परंपरागत धर्म के प्रति उपेक्षा और तिरस्कार की भावना पैदा हुई। इसके साथ ही एक ही जनजाति के व्यक्ति एक-दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखने लगे जिससे उनके मध्य पारस्परिक अभियोजन की समस्या भी पैदा हुई। इन्हीं सबके बीच आदिवासियों के मध्य भाषाई समस्या का भी जन्म हुआ, साथ ही हिंदू जातीय व्यवस्था के परिणामस्वरूप आदिवासी समाज में भी ऊँच-नीच का चलन बढ़ने लगा, इससे विभिन्न जनजातियों के मध्य तनाव और संघर्षों की शुरूवात हुई। सांस्कृतिक विघटन से जनजातीय कलाओं का व्यापक पैमाने पर ह्रास हुआ। आज जनजातियों की बहुत सी पारंपरिक संस्थाएँ विलुप्त होने के कगार पर हैं। बस्तर के 'घोटुल' जैसे शिक्षा और संस्कृति के तमाम केंद्र आज अपना अस्तित्व लगभग खो चुके हैं।

आजादी के बाद देश के विकास में गति आई है। उद्योग के साथ-साथ कृषि क्षेत्र में भी मशीनीकरण लगातार बढ़ रहा है। भारत में अधिकांश जनजातियाँ कृषि और वनोपज से जुड़ी हुई हैं। मध्य भारत के विभिन्न क्षेत्रों में आदिवासी खेतिहर मजदूर के रूप में भी कार्य करते हैं। प्रकृति से गहन लगाव होने के कारण अधिकांश आदिवासी तीज-त्योहारों और कृषि के बीच गहरा संबंध है लेकिन विकास की आपाधापी में बहुत से आदिवासी समुदाय अपनी जड़ों से कट गए हैं। गाँवों की परंपरागत लोक कलाएँ या तो लुप्त हो गई हैं या विशिष्ट अवसरों पर वे रश्म अदायगी के तौर पर ही विद्यमान हैं। उदाहरण के लिए धान की रोपाई और कटाई के मौसम में विभिन्न आदिवासी जातियाँ गीत गाया करती थीं लेकिन आज रोपाई-कटाई के परंपरागत गीत विलुप्त हो चुके हैं। यही स्थिति अन्य अवसरों पर गाए जाने वाले लोक-गीतों की है। उनका स्थान फिल्मी गीतों ने ले लिया है। इसी प्रकार छोटे-छोटे परंपरागत त्योहारों को मनाने की परिपाटी लगातार समाप्त होती जा रही है। मध्य भारत की कोल जनजाति अपने प्रसिद्ध होली गीत 'कोलदहका' के लिए प्रसिद्ध थी लेकिन आज 'कोलदहका' को गाने वाले लोग नाम मात्र के रह गए हैं। आदिवासियों की नई पीढ़ी अपनी सांस्कृतिक विशिष्टताओं के प्रति गंभीर नहीं है और यही कारण है कि सदियों से जो कलाएँ परंपरागत ढंग से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होती आ रही थीं अब वे विलुप्त होने के कगार पर हैं। आदिवासियों के मध्य अपनी कला-संस्कृति के प्रति हीनताबोध भी उनके सांस्कृतिक विघटन में निर्णायक रहा है।

हिंदी के विभिन्न उपन्यासकारों ने जनजातीय समाज में व्याप्त सांस्कृतिक विघटन को प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है। बस्तर अंचल के जीवन पर आधारित 'सूरज किरन की छाँव' उपन्यास में लेखक एक गोंड युवती बंजारी जो अब धर्मांतरण के पश्चात बेंजो जोसेफ बन चुकी है के अंतर्द्वंद्व को बखूबी चित्रित करता है। उसका पति जोसेफ चर्च में काम करता है और वह दिन भर अकेले रहती है सांस्कृतिक भिन्नता के कारण वह अपने को जोसेफ से भी अलग-थलग महसूस करती है। यह देखने में आया है कि एक ही आदिवासी समाज के लोग अलग-अलग धर्मों का पालन करते हैं, धर्मांतरित होने के बावजूद इन आदिवासियों में परस्पर विवाह इत्यादि होते रहते हैं, लेकिन सांस्कृतिक मूल्यों की भिन्नता के कारण इनके आपसी सामंजस्य में बाधा पैदा होती है जिससे विघटन को बढ़ावा मिलता है। बंजारी को गाँव से इतर शहरी माहौल बड़ा अटपटा लगता है। लेखक आगे बंजारी की स्थिति पर लिखता है–"घर में दिन भर अकेले बड़ा खराब लगता। यहाँ कोई काम-धाम था नहीं। रोटी बनाना वह भी एकदम बदली। वहाँ तो भुनसारे से मुरगूल में मका खाकर चल देती थी, मरैया में पेज साथ देती, तो चकौड़ा, पथरचटा, कजरा, खटुआ और कचनार के पत्ते बियारी में। यहाँ सुबह हुई की चाय चाहिए, सिर पर सूरज आते तक खाना।"[1]

ईसाई मिशनरियों के आगमन से देश में धर्मांतरण की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला इसी तरह बहुत से आदिवासी समाज हिंदुओं के निकट संपर्क में आए। इन दोनो स्थितियों ने आदिवासियों की पारंपरिक जीवन शैली में तमाम बदलाव किए। धीरे-धीरे करके आदिवासी अपनी सांस्कृतिक विशिष्टताएँ भूलते गए, यहाँ तक की मेले और त्यौहार जो आदिवासियों की जीवन शैली के अनिवार्य अंग थे समय के साथ खत्म होते गए। झारखंड की मुण्डा जनजाति के जीवन पर आधारित 'पठार पर कोहरा' उपन्यास में लेखक आदिवासी जीवन में आए इस संकट पर टिप्पणी करता है–"सांस्कृतिक विखंडन होने लगा तो जनजातियों की मौलिक संस्कृति में बाहरी संस्कृतियों का घालमेल होने लगा। ऐसी परंपराएँ जो जीवन की जरूरतों से जन्मी थीं, आवश्यकताओं की पूर्ति के वैकल्पिक साधन उपलब्ध होते ही मरती गईं।"[2] धर्मांतरण ने आदिवासियों में अपने परंपरागत धर्म के प्रति उपेक्षा और तिरस्कार की भावना पैदा की इसके अलावा मेल-जोल और साहचर्य की भावना जो आदिवासी संस्कृति की विशिष्ट पहचान थी धीरे-धीरे कर समाप्त होती गई। 'धार' उपन्यास में लेखक इस समस्या पर विचार करते हुए लिखता है–"जब से मेरी क्रिश्चियन हुई थी, मैना का आना-जाना लगभग छूट चुका था। बाप की अंत्येष्टि में भी ये लोग बाँसगड़ा नहीं गए थे और उसकी दूसरी शादी और लॉबीर में भी नहीं? एक जाति, एक रिश्ते से इतने अंतरंग लोग–यह धरम कितना भयंकर

Scanned with CamScanner

साँप है जो सूंघ जाता है उन्हें।"[3]

तेजिंदर द्वारा लिखित 'काला पादरी' उपन्यास धर्मांतरण की समस्या को सबसे सशक्त ढंग से उठाया गया है। 'काला पादरी' ईसाई मिशनरी की कार्यप्रणाली, उसके प्रबंध तंत्र, युवा मिशनरियों की सोच और उनके द्वंद्व की छानबीन के साथ धर्मांतरण के मुद्दे की इस तरह से पड़ताल करता है कि मिशनरी समाज के उद्देश्यों की कई नई परतें खुलने लगती हैं। उपन्यास में आदित्य जब फादर मैथ्यूज़ से ईसाई मिशनरियों द्वारा किए जाने वाले धर्मांतरण पर सवाल उठाता है तो फादर मैथ्यूज़ तर्क देते हैं–"इनके पास ईश्वर का कोई इमेज नहीं था डियर, जिसकी ओर ये आस भरी निगाह के साथ देख सकें, जब हम यहाँ आया तो राजा भी अपना देवी को प्लांट कर रहा था। यू नो हाऊ टू प्लांट ए थाट, इट इज वैरी इम्पार्टेंट, हमने भी प्रभु यीशु की इमेज़ प्लांट कर दी, इट वाज ए वार ऑफ इमेज़ेज, जिसमें जीत हमारी हुई।"[4] इस तरह फादर मैथ्यूज़ वर्चस्व की लड़ाई में अपनी जीत को धर्म की जीत और धर्म की श्रेष्ठता के रूप में साबित करने की कोशिश करते हैं लेकिन उनका ही अनुयायी जेम्स खाखा जिसके बाप-दादे कभी कन्वर्टेड हुए थे फादर मैथ्यूज़ की इस मानसिकता पर प्रति प्रश्न करता है–"क्या यह सच नहीं कि हमारी इमेज़ेज में पहाड़ थे, नदियाँ थीं, पेड़ थे, शेर थे, चीते थे और राजा ने हमें बंधुआ बना दिया, फिजिकली और इक्नॉमिकली एक्सप्लायट किया, लेकिन आपने क्या किया? यू रादर टेम्ड अस, आपने हमें पालतू बना दिया, हमारे लिए हिंदू फंडामेंटलिस्टों और आपमें अब कोई खास फर्क नहीं है। हमारी सारी इमेजेज़ छीन ली आप लोगों ने ...।"[5] जेम्स खाखा का यह प्रश्न मिशनरी कार्य में लगे युवा मिशनरियों के मन में उठते सवालों को व्यापक फलक प्रदान करता है, यहाँ पर लेखक यह संकेत देता है कि चर्च के कार्यों में लगी युवा पीढ़ी गहरे असंतोष की शिकार है। जेम्स की प्रतिक्रिया पर फादर कहते हैं–"वट यू हैव टु पे द प्राईज़ फॉर एवरीथिंग यू गेट।" इस पर अपना असंतोष जाहिर करते हुए जेम्स खाखा कहता है–"सो यू आर मोर ए बिज़नेसमैन दैन प्रीस्ट।"[6]

'काला पादरी' बार-बार स्पष्ट करता है कि धर्मांतरण के बाद की तीसरी पीढ़ी धर्म को उस सहजता से स्वीकार नहीं कर पा रही है जिस सहजता से पहली पीढ़ी ने स्वीकार किया था। दरअसल जो पहली पीढ़ी मिशनरियों के प्रभाव में ईसाई बनी थी उसकी लड़ाई भूख से थी। ईसाइयत स्वीकार करना वस्तुतः उनके लिए भूख से मुक्ति का माध्यम था। भूख से मुक्ति के बाद की अगली पीढ़ी तो खुद को पूरी तरह ईसाई बनाने में ही व्यस्त रही लेकिन जेम्स खाखा की पीढ़ी के मन में अब चर्च के कार्यों में व्याप्त विसंगतियों को लेकर ढेरों सवाल पैदा हो रहे हैं। जेम्स खाखा फादर मैथ्यूज़ के संबंध में आदित्य से कहता है–"फादर मैथ्यूज़ से मैं जब भी मिलता हूँ, वे हमें हमारे बौनेपन की याद दिलाते हैं।"[7] इस तरह हम देखते हैं कि वर्षों पूर्व धर्मांतरित हुए आदिवासियों में आज अपनी स्थिति को लेकर गहरा असंतोष है। अपने असंतोष को आगे पुनः आदित्य से जाहिर करते हुए जेम्स कहता है–"माँ कहती है कि चूँकि चर्च ने तुम्हारे पिता और दादा को रोटी दी थी, काम दिया था और राजा की बेगार से मुक्ति दिलवाई थी, इसलिए तुम्हें अपना पूरा जीवन चर्च की सेवा में बिताना है। क्या यह एक तरह का बंधुआ विचार नहीं है।"[8] जेम्स खाखा अपना विरोध प्रकट करते हुए आदित्य से फिर कहता है–"आखिर एक-दो पीढ़ी पहले तो हमें अपने अस्तित्व का पता नहीं था ठीक से, और अब जब पता चल गया है तो कहते हैं कि भूल जाओ, तुम्हारा कुछ नहीं है, जो कुछ है प्रभु परमेश्वर का है और परमेश्वर का रास्ता मिशनरीज से होकर जाता है, माई फुट, मैं कहता हूँ, परमेश्वर का रास्ता हमारी छोटी सी नदी ईब से होकर गुजरता है, हमारे पेड़ों और पहाड़ों से होकर जाता है, और तो और सोजेलिन मिंज की आँखों से होकर जाता है।"[9] इस तरह हम देखते हैं कि जेम्स खाखा की टिप्पणियाँ उसे विशिष्ट चरित्र बनाती हैं जो धर्मांतरण के फलस्वरूप आदिवासी समाज में व्याप्त अंतर्द्वंद्व और अपनी जमीन से कटने की पीड़ा को मार्मिकता के साथ व्यक्त करता है। उपन्यास में कई ऐसे प्रसंग भी हैं जो इस तरह के अन्य मनोभावों को सहजता से उजागर करते हैं। आदित्य जब लुईसा टोप्पो नामक युवती से पूछता है कि उसके पिता क्या करते हैं, तो उसका जवाब होता है कि–"वे यीशु के मंदिर में प्रार्थना की बेगार कराते हैं।"[10] यानी खेतों में बेगार करने वालों का उपयोग अब प्रार्थना के बेगार में हो रहा है। निश्चय ही यह आदिवासी समाज में संक्रमण की गंभीर समस्या की ओर संकेत करता है।

'पठार पर कोहरा' उपन्यास में लेखक मुख्यतः विकास और औद्योगीकरण को आदिवासियों के जीवन में आए संकट का कारण मानता है। हालाँकि समस्या तब शुरू होती है जब विकास में हिस्सेदारी के बावजूद आदिवासियों को उपेक्षित कर दिया जाता है, शताब्दियों से जिन संसाधनों पर उनका अधिकार चला आ रहा है विकास के नाम पर वे उससे बेदखल किए जा रहे हैं। लेखक इस पर चिंता प्रकट करता है–"आधुनिक विकास के नारों की उल्टियाँ करती चिमनियाँ आदिवासियों के जंगल, जमीन और पारंपरिक रोजगार तक छीनती गई हैं। संजीव को लगता है, स्वतंत्र भारत के राष्ट्रीय विकास की जितनी बड़ी कीमत आदिवासी समाज ने चुकाई है उतनी शायद किसी समाज ने अकेले दम नहीं चुकाई।"[11] इसी उपन्यास में लेखक मुण्डा जनजाति में धर्मांतरण के कारण अपने पारंपरिक रीति-रिवाजों और देवी देवताओं से कटने की प्रक्रिया को स्पष्ट करता है–"बनासकाँठा के लगभग सारे मुण्डा क्रिस्तान बन गए हैं। गले में 'क्रास' पहिरने लगे हैं। चर्च भी जाते हैं और सरना में भी आते हैं पर सरना की पूजा में वे अपना हाथ नईं लगाते। क्रिस्तान बनते ही बाबू जो हो गए हैं बनासकाँठा के मुण्डा। अपने पुराने रीति-रिवाज एकदम धोकर पी नहीं गए सो मुण्डा भाइयों के साथ रोटी-बेटी का नाता चल रहा है पर वे रीति-रिवाज धीरे-धीरे छोड़ना शुरू कर चुके हैं। यहाँ तक कि सिंगबोंगा को भी भूल चुके हैं जो मुण्डा लोगों का सबसे बड़ा देवता है।"[12] उपन्यास में लेखक

Scanned with CamScanner

बाहरी लोगों के हस्तक्षेप द्वारा आदिवासी समाज में आए बदलावों को रेखांकित करता है। ठेकेदारों, साहूकारों और सरकारी अफसरों ने न केवल आदिवासियों का शोषण किया बल्कि उनकी संस्कृति को भी गहरी ठेस पहुँचाई। लेखक इस संबंध में लिखता है–"वनप्रांतर में दीकुओं के प्रवेश के बाद जंगल के समीकरण बदलने लगे–आर्थिक और सामाजिक भी। सबसे पहले जंगल ने खोई अपनी प्राकृत मौलिकता। फिर खोने लगी जनजातियों की अपनी प्राकृत भाषाएँ और बोलियां। इसके बाद वन और वनेतर रीति-रिवाजों और संस्कारों में घाल-मेल शुरू हुआ।"[13]

आदिवासियों के जीवन पर संकट की समस्या को 'अल्मा कबूतरी' में लेखिका बहुत संजीदगी के साथ उठाती हैं। बुंदेलखण्ड की कबूतरा जनजाति भी नटों की भाँति ही खानाबदोश है और तथाकथित सभ्य समाज के लोग (कज्जा) उन पर तरह-तरह के अत्याचार करते हैं। कबूतरा जनजाति के संबंध में गोपाल राय लिखते हैं–"भारत में आज भी कुछ ऐसी अभागी जनजातियाँ हैं जो आजादी का अर्थ नहीं जानतीं। उनके पास न अपनी जमीन है, न ठिकाने का घर बार। औपनिवेशिक शासन ने इन्हें 'जरायमपेशा' जाति घोषित कर न केवल तथाकथित 'सभ्य' समाज की नजरों में उपेक्षा और घृणा का पात्र वरन पुलिस के अत्याचार का सबसे नरम चारा भी बना दिया था। यद्यपि देश के आजाद होने के बाद इन जातियों को समान नागरिकता का अधिकार प्राप्त हो गया है, पर जीविकोपार्जन का कोई सम्मानजनक साधन न उपलब्ध होने के कारण इनके पुरुष अपराधकर्म और स्त्रियाँ देह-व्यापार के लिए विवश होती हैं।"[14]

'गगन घटा घहरानी' उपन्यास में लेखक सांस्कृतिक विघटन और आदिवासियों की नई पीढ़ी में पड़ने वाले दुष्प्रभावों को रेखांकित करता है। आधुनिकता से सराबोर नई पीढ़ी को अपनी पारंपरिक पहचान एक बोझ लगने लगी है और वे उससे निजात पाना चाहते हैं उनकी इस प्रवृत्ति ने प्राचीनकाल से चली आ रही जनजातीय कलाओं, रीति-रिवाजों और भाषा का व्यापक पैमाने पर ह्रास किया है। लेखक जनजातियों के सांस्कृतिक अवमूल्यन पर लिखता है कि–"मुरहू के लोग अपनी भाषा भूल गए। अपनी वेश-भूषा, चाल-चलन सब उन्हें छोटा लगने लगा। सड़क के किनारे चाय-पान की दुकाने खुल गई। लड़के दिन-दिन भर उन दुकानों पर बैठकर अनाप-शनाप गप्पे हाँकते रहते हैं। दुकानों पर बजती हैं फिल्मी धुनें। रेडियो, रिकार्ड। अपना नाच-गाना, झूमर-अखाड़ा सब भूलकर आती-जाती लड़कियों पर फिकरे कसते हैं। नए-नए कपड़ों, शर्ट और नुकीले जूते पहनकर ऐंठ कर चलते हैं।"[15]

भारतीय जनजातियों में भाषा की समस्या कई रूपों में पाई जाती है। जिन जनजातियों का आकार बड़ा है और वह बहुत बड़े क्षेत्रों में निवास करती हैं उनमें भी आपस में उचित संवाद नहीं हो पाता, क्योकि भारत में बोलियों की प्रकृति हर 25-30 कि.मी. में बदलती रहती है। जनजातीय लोग प्रायः दुर्गम इलाकों में रहते हैं जहाँ उनकी बोली का क्षेत्र बहुत सीमित होता है। ऐसे में उन्हें बाहरी ज्ञान-विज्ञान से परिचित कराने और समाज की मुख्य धारा में शामिल करने के प्रयास में भाषा की समस्या का गंभीर रूप सामने आता है। आदिवासियों के सांस्कृतिक विघटन में भाषा का प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। बहुत सी आदिवासी भाषाएँ आज विलुप्त होने की कगार पर हैं। अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह की कई छोटी-छोटी जनजातियों की भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं। भाषाओं के विलुप्त होने से एक पूरी की पूरी संस्कृति नष्ट हो जाती है जिससे व्यापक पैमाने पर लोक-संस्कृति का ह्रास होता है। यह स्थिति सांस्कृतिक विघटन को गंभीर बनाती है। सरकार के लिए सबसे जरूरी यह है कि आदिवासी बच्चों को प्रारंभिक कक्षा से ही अपनी भाषा के साथ-साथ उस प्रदेश की मुख्य भाषा का अध्ययन कराया जाए, साथ ही हिंदी और अंग्रेजी में एक भाषा पर उनकी पकड़ मजबूत हो, तभी वह ज्ञान-विज्ञान से अच्छी तरह जुड़ सकते हैं और अपनी परंपरागत संस्कृति को भी सुरक्षित रख सकते हैं। नई शिक्षा नीति-2020 से भाषाई संरक्षण और संवर्धन की संभावनाएँ पैदा हुई हैं। इसके व्यावहारिक परिणाम के लिए जमीनी स्तर पर प्रयास करने होंगे। भारत की बहुरंगी संस्कृति की रक्षा के लिए आज आदिवासी समाज और लोक-संस्कृति के व्यापक संरक्षण की आवश्यकता है।

संदर्भ :

1. अवस्थी, राजेंद्र, सूरज किरन की छाँव, संस्करण 1979, पृ. 3
2. सिंह, राकेश कुमार, पठार पर कोहरा, द्वितीय संस्करण 2005, पृ. 228
3. संजीव, धार, आवृत्ति 1997, पृ. 80
4. तेजिंदर, काला पादरी, प्रथम संस्करण 2005, पृ. 44
5. वही, पृ. 45
6. वही, पृ. 45
7. वही, पृ. 46
8. वही, पृ. 47
9. वही, पृ. 48
10. वही, पृ. 53
11. सिंह, राकेश कुमार, पठार पर कोहरा, द्वितीय संस्करण 2005, पृ. 73
12. वही, पृ. 73
13. वही, पृ. 228
14. राय, गोपाल, हिंदी उपन्यास का इतिहास, प्रथम संस्करण 2002, पृ. 389
15. पाठक, मनमोहन, गगन घटा घहरानी, द्वितीय संस्करण 2000, पृ. 51

असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी)
शासकीय महाविद्यालय बलरामपुर
जिला–बलरामपुर-रामानुजगंज (छ.ग.)
umeshsumitraraj@gmail.com
M. : 8120975244

Scanned with CamScanner